Educational Ethics in Jainism

[in the perspective of Value based education]

Dr Yogesh Kumar Jain
Assistant Professor
Jainology and Comparativre Religion & Philosophy Department
Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun

मानव प्रकृति की सर्वश्रेश्ठ संरचना है तथा मानव अपने बौद्धिक एवं भावात्मक विकास के कारण संसार के सभी प्राणियों में श्रेश्ठ माना जाता है। मानव के पास समस्त जागतिक प्राणियों से ज्यादा विकसित मस्तिश्क है तथा मस्तिश्क के विकास में सहायक अथवा दि॰ा निर्दे॰ करने का कार्य ि॰क्षा द्वारा ही संभव है। ि॰क्षा के द्वारा मानव ज्योति विहीन दीपक, गंध विहीन पुश्प एवं नींव विहीन भवन के समान है। कहा भी है कि-

ऐसां न विद्या तपो न दानं, ज्ञानं न भीलं गुणो न धर्मं।
ते मृत्युलोके भुविभारभूता, मनुश्यरूपेण मृगा॰चरन्ति।।

ि॰क्षा के संदर्भ में कहा गया है कि-

मतेव रक्षति पितेव हिते नियुक्ते, कान्तेवचायि रमत्यपनीय खेदम्।
लक्ष्मी तनोति वितनोति च दिक्षुकीर्ति किं किं न साधयति कल्पलतेय विद्या।[1]

अर्थात् विद्या, बुद्धि, भान्ति एवं कु॰लता में वृद्धि करती है। माता के समान पोश्ण, पिता के समान सद्मार्ग बताती है, पत्नि के समान प्रसन्नता एवं आनन्द प्रदान करती है। इस प्रकार ि॰क्षा मनुश्य को सर्व संस्कार प्रदान करती है।

प्राचीन काल से अद्यतन समय के परिवर्तन के साथ ही ि॰क्षा के स्वरूप में भी परिवर्तन आये हैं। प्राचीन ि॰क्षा पद्धति व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक थी। वह ि॰क्षा नैतिक, आध्यात्मिक एवं मानवीय मूल्यों से सभ्य समाज एवं सामाजिक सौहार्द का निर्माण करती थी। तत्कालीन ि॰क्षा पद्धति ''सा विद्या या विमुक्तये'' की भावना वाली थी परन्तु आज ि॰क्षा का जो स्वरूप परिवर्तित हुआ है उसमें ि॰क्षा का उद्दे॰य ''सा विद्या या नियुक्तये'' हो गया है। आज ि॰क्षा का उद्दे॰य केवल बौद्धिक विकास करना रह गया है परन्तु मूल्य विहीनता के अभाव में मानव को मानव बनाने के अपने महान उद्दे॰य से ि॰क्षा एवं ि॰क्षापद्धति विमुख होती जा रही है।

[1] सुभाश्वितानि, रत्नभण्डागार, पृ. ३१/१४।

वर्तमान भौतिकतावादी युग में प्राचीन आध्यात्मिक और नैतिक मूल्य मृतप्राय हो गये हैं। आज का मानव सर्वतः व्यक्तिवादी हो गया है। यही कारण है कि आज सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि सभी क्षेत्रों में मूल्य हीनता के अभाव में अनैतिकता एवं स्वार्थपरता का व्यापार हो रहा है। जैनधर्म-द□न ने उपरोक्त सभी समस्याओं का समाधान जैन जीवन भैली के रूप में दिया गया है। जो व्यक्ति जैनाचार अथवा जैन जीवन भैली के अनुरूप आचरण करेगा वह अपने जीवन को संस्कारों से युक्त बनायेगा तथा उसके सान्निध्य में आने वाले सभी प्राणी सदाचार की ओर स्वतः ही उन्मुख हो जायेंगे।

जैनद□न व्यापक एवं उन्मुक्त द□न है। यहां कोई व्यक्ति, जाति, वर्ग या सम्प्रदाय का भेद नहीं है। आचारांग में कहा है कि- ‘‘नो हीणे, नो अइरित्ते, तम्हा पंडिए नो हरिसे नो कुप्पे’’ अर्थात् कोई हीन नहीं है और न ही कोई अतिरिक्त है इसलिए जाति के आधार पर कोई अभिमान न करे और कोई अपने को नीचा न समझे। जैनधर्म-द□न प्राणिमात्र का धर्म है तथा यह व्यक्ति प्रधान न होकर गुण अथवा कर्म प्रधान धर्म है। कहा भी है कि- **‘‘कम्मुणा वंभणो होई, कम्मुणा होई खत्तियो, वइस्यो कम्मुणा होई, सुद्दो होई कम्मुणा।’’** (उत्तराध्ययन) अर्थात् मनुश्य कर्म से ही ब्राह्मण होता है, कर्म से ही क्षत्रिय होता है, कर्म से ही वै□य होता है तथा कर्म से ही भूद्र होता है।

जैनद□न में मूल्यमीमांसा पर सर्वाधिक बल दिया गया है। यद्यपि मूल्यमीमांसा का विवेचन प्रत्येक भारतीय धर्म-द□न में किया गया है तथापि मूल्यों का जो व्यवहारिक विवेचन ‘जिसमें किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं है’ केवल जैनद□न में ही प्राप्त होता है। मूल्य सामाजिक जीवन प्रणाली से निकले कुछ व्यवहारिक मानक होते हैं जो व्यक्ति और समाज, व्यश्टि एवं समश्टि के बीच व्यवहार के समायोजन से बनते हैं। मूल्य व्यक्ति को आत्मिक भक्ति प्रदान करते हैं जिससे व्यक्ति अथवा समाज अपना सर्वांगीण विकास करता है। जैनद□न में वर्णित मानवीय मूल्यों यथा अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, संयम, समता एवं समन्वय की अनुपालना से संसार में व्याप्त समस्त समस्यायें स्वतः समाप्त हो सकती हैं।

आ□ागर्ता प्रतिप्राणी यस्मिन् वि□वमणुपमम्।
कस्यकियतायाति वृथा को विस्मोऽयम्।।[२]

वर्तमान यांत्रिक एवं सुविधाभोगी युग में जहां मूल्यों का ह्रास निरंतर हो रहा है वहीं जैनद□न के मूल्यपरक सिद्धांत एवं जीवन□ैली आज भी प्रासंगिक देखी जा सकती है। जातिवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रश्टाचार, अनु□ासनहीनता, व्यसनयुक्त जीवन, न□ो की आदत, गुरू-□िश्य सम्बंधों में बढ़ती दूरियां, रिस्तों की टूटती मर्यादायें एवं काम-वासना की बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने एवं वि□व□ान्ति एवं वै□िवक ऐकता जैसे चरम लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु जैन जीवन भैली की प्रासंगिकता को देखा जा सकता है।

---

[२] आत्मानु□ासन।

मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना, व्यक्तित्त्व निर्माण एवं स्वस्थ्य समाज के निर्माण की संकल्पना िक्षा द्वारा ही फलीभूत हो सकती है। आज आवश्यकता है कि िक्षा रोजगार परक होने के साथ साथमूल्य परक भी हो। विद्यार्थियों में मूल्यों संस्कारों के विकास हेतु जितनी जिम्मेवार िक्षक, िक्षा एवं िक्षालय की है उतनी ही जबाबदेही परिवार एवं माता-पिता की भी है।

भारतीय संस्कृति नैतिक तथा मानवीय मूल्यों की जननी रही है। मातृदेवोभवः पितृदेवोभवः आचार्य देवोभवः तथा अतिथिदेवोभवः जैसे उच्च संस्कारों तथा अहिंसा परमो धर्मः, जियो और जीने दो तथा वसुधैव कुटुम्बकम् जैसी भवनाओं का संस्रण िक्षा के माध्यम से पीढी दर पीढी हाता रहा है। प्राचीन काल मे जहा गुरूओं को दैव तुल्य माना जाता है तथा िद्वा का कोई मूल्य नही होता था वहीं आज गुरूओं का अपमान आम बात है तो गुरूओं द्वारा िक्षा का निरादरभी सहज देखा जा सकता है।

मैथिलीरण जी की निम्न पंक्तियां सार्थक लगती है कि-

हम कौन थे, क्या हो गये और क्या होंगे अभी।
आओं विचारे आज मिलकर, यह समस्याएं सभी।
देखें कभी पूर्वज हमारे स्वर्ग से आकर हमें।
आंसू बहायें भोकमें द सवे में पाकर हमें।।

वर्तमान में हम िक्षा को नये प्रयोगो एवं प्रयोजना, नवीन पद्धति नयी तकनीक, नूतन समाज संरचना की ओर अग्रसर तो हैं परन्तु प्राक्तन संस्कारों को आगे ले जाने हेतु कोई प्रयास नहीं की रहे है। यही कारण है कि भारत जो कभी वि गुरू कहलाता था आज िक्षा हेतु स्वयं ही अन्य राष्ट्रों की ओर टकटकी लगा रहा है।

विविद्यालय िक्षा आयोग (१९४८) ने संस्तुति प्रदान करते हुये कहा था कि हमें विद्यार्थियों में ऐसी आदतों का विकास करना चाहिए जिससे उनमें अच्छी नैतिक मानसिक व भारीरिक आदते विकसित हो सकें। राीय िक्षा नीति १९८६ के अनुसार हमारे बहुवर्गीय समाज में िक्षा को सर्वव्यापी व भावत मूल्यों को प्रोत्साहित करना चाहिए तथा भारतीस जनता में राीय एकता की भावना बएक्रे औ संकीर्ण सम्प्रदायवाद धर्मान्धता हिंसा अन्धविास व भाग्यवाद को समाप्त किया जा सके।

जैनदन में मानवीय मूल्यों के विकास हेतु पांच व्रतों की व्याख्या की गई है। अहिंसा के पालन द्वारा वह वात्सल्य एवं समभाव को प्राप्त करे। सत्य के द्वारा वह वाणी के प्रयोग में स्वयं मर्यादित हो तथा सदाचार का पालन करे। आचौर्य के पालन से भय मुक्त जीवन जिये, ब्रह्मचर्य के पालन से स्त्रीके स्वातंत्र की रक्षा का पालन करे। वासना मुक्त जीवन जीने हेतु भी यह व्रत उपयोगी है। अपरिग्रह व्रत के पालन से व्यक्ति संग्रह की प्रवृति से बचता है।सम्यग्दन विचार भुद्धि हेतु, सम्यग्ज्ञान यथार्थ ज्ञान हेतु एवं सम्यकचारित्र

उत्ततचारित्रिक विकास हेतु , संयम समत्व के विकास हेतु आवश्यक है। जैनदर्शन में मूल्यों की केवल सैद्धान्तिक विवेचना ही नहीं की गई है अपितु प्रायेागिक रूप को भी बताया है। शिक्षा शिक्षक एवं शिक्षार्थी मिलकर एक समग्र प्रयास करें तथा अभिभावक धर्मगुरू ण्वं संचार क्रान्ति के साधन की त्रिपदी अपना योदान दे तो नैतिक जगत की स्थापना में महान योगदान हो सकता है।

❖ मूल्य से तात्पर्य–

मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत उन इच्छाओं और लक्ष्यों के रूप में परिभाशित किये जा सकते हैं जिन्हें अनुबन्धन, अधिगम या सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा अभ्यंतरीकृत किया जाता है ओर आत्मनिश्ठ अधिमान, मान तथा आकांक्षाओं का रूप धारण कर लेते हैं। धर्म भास्त्रों में नैतिक नियमों को मूल्य कहा गया है। जब नैतिक नियम मनुश्य के व्यवहार को नियंत्रित करने लगते हैं तो वे मूल्य कहलाते हैं। मानवशास्त्री मूल्यों को सांस्कृतिक लक्षणों के रूप में स्वीकार करते हैं। उनकी दृश्टि में संस्कृत और मूल्य अभिन्न हैं। मनोवैज्ञानिको ने मूल्यों को मनुश्य की रूचियों और अभिवृत्तियों के रूप में मानस हैं। दर्शन भारूत्र में मनुश्य के जीवन के प्रति दृश्टिकोण को मूल्य की संज्ञा दी है। इस प्रकार मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत एवं स्थापित ऐसे मानदण्ड हैं जिनकी अनुपालना समाज के सम्यक संचालन हेतु अत्यंत आवश्यक होती है। मूल्यों से ही संस्कृति का निर्माण होता है एवं संस्कृति की पहचान होती है।

जैन आचार संहिता के अनुसार मूल्य उसे कहते हैं जो सांसारिक दुःखों को दूर करने में सहायक हो तथा जिससे आध्यात्मिक उपलब्धि हो। आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार चारित्रं खलु धम्मो" अर्थात् मनुश्य का चारित्र–आचरण ही निश्चय से धर्म है। जैन परंपरा में मूल्यों की व्यापकता को इसी से समझाा जा सकता है कि यहां साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविका, गृहस्थ आदि के लिए पृथक्–पृथक् आचरण अर्थात् मूल्य निर्धारित हैं। यहां मूल्यों को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया गया है– १. साध्यमूलक मूल्य अर्थात् स्वतः मूल्य एवं २. साधन मूलक मूल्य जिन्हें परतः मूल्स भी कहते हैं। साधन मूल्य वे हैं जिनका अन्वेशण स्वतंत्र रूप से न होकर दूसरे उद्देश्यां की प्राप्ति के लिए किया जाता है। जैसे समता, सयम, समन्वय एवं सह अस्तित्व आदि। ये मूल्य साध्य मूल्यों की प्राप्ति में साधक होते हैं।साध्य मूल्य स्वयं अपने आप में मूल्यवान है।

उवसमेण हणो कोहं, माणं मद्दवया जिणे।
मायं चज्जभावेणा लोभं संतोशओ जिणे।।[3]

क्षमा, मृदुता, संतोश आदि मूल्यों की महत्ता प्रपािदित करते हुये जैनदर्शन में कहा गया है कि क्रोध को क्षमा से मान को मृदुता से माया को सरलता से एवं लोभ को संतोश से जीता जा सकता है।

[3] दशवैकालिक ८/३६

मूल्यों से युक्त आचरण करने वालों को देव भी नमस्कार करते हैं। ऐसा प्रतिपादन करते हुये जैनागमों में कहा गया है कि-

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो।
देवावि तं नमसंति जस्य धम्मे सया मणो।।[४]

अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य औश्र अपरिग्रह ये पांच समाज व्यवस्था के नीति निर्देशक तत्व हैं। जहां समाज है वहां इदनका व्यापक स्वरूप सहज ही देखा जाता है। स्वतंत्रता समानता सहयोग सहानुभूति और सहिश्णुता कि बिना समाज का सम्यक संचालन संभव नहीं है।

अहिंसा- जैनदर्शन में अहिंसा को सर्वोच्च मूल्य माना गया है तथा कहा गया है कि- ''धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो'' (दसवैआलियं१/१) अहिंसा संयम एवं तप धर्म के मूल हैं। ज्ञानी होने अथवा शिक्षित होने का सार यही है कि किसी भी प्राणी की हिंसा न करे। अहिंसा मूलक धर्म ही समता का सार है।

एयं खु नाणियो सारं, जं न हिंसई किंचण।
अहिंसा संयमं चेव, एतावतं वियाणियां।।[५]

अर्थात् यदि व्यक्ति यह चिंतन करने लगे कि जैसा व्यवहार वह स्वयं नहीं चाहता वैसा वह दूसरों के लिए नहीं चाहे तो स्वतः ही अहिंसक वातावरण सौहार्द का वातावरण बनने लगेगा।

सत्य- जैनदर्शन में अहिंसा के समान सत्य को भी उत्कृश्ट मूल्य बताया है। सत्य के संदर्भ में लिखा है कि - **सच्चम्मि धिइं कुव्वाहा। एत्थोवरए मेहावी सव्वं पावं कम्मं झोसई।**[६]अर्थात् हे साधको! सत्य में धृति करो और स्थिति करो। सत्य में संलग्न मेधावी सब पाप कर्मों को जला डालता है।

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः।
सत्येन वाति वायुश्च सर्वसत्ये प्रतिश्ठितम्।।[७]

अर्थात् सत्य ने ही पृथ्वी को धारण कर रखा है सत्य से ही सूर्य तपता है सत्य से ही हवा बहती है और सब कुछ सत्य ही स्थिर है। जैन आगमों में **''तं सच्चं खु भयवं''**[८] कहा है। अर्थात् सत्य ही भगवान है।

सत्यमेव जयते जैसे अनेकानेक सदवाक्य हम प्रतिदिन पढ़ते रहते हैं परन्तु आचरण के अभाव में जीवन मूल्य विहीन ही है। रत्नकरण्ड श्रावकाचार में आचार्य स्थूल झूठ बोलने का निशेध करते हैं-

---

[४] दसवैआलियं, १/१
[५] सूत्रकृतांग सूत्र, १/१/४/१०
[६] आचारांग....
[७] आचार्य श्री नानेस, जिणधम्मो, पृ. ६२६।
[८] अंगसुत्ताणि भाग ३।

स्थूलमलीकं न वदति, न परान् वादयति सत्यमपि विपदे।
यत्तद्वदन्ति सन्तः, स्थूलमृषावादवैरमणम्।।[९]

अर्थात् जो साधक स्थूल झूठ स्वयं नहीं बोलता और न दूसरों से बुलवाता है तथा ऐसा सत्य भी नहीं बोलता जो अपने या दूसरों के लिए विपत्ति का कारण बने, वह सत्याणुव्रती कहलाता है।

सत्याणुव्रत के पांच अतिचार-

परिवादरहोभ्याख्या पै□ून्यं कूटलेखकरणं च।
न्यासापहारिताऽपि च व्यतिक्रमाः पंच सत्यस्य।।[१०]

अर्थात् धर्म विरूद्ध झूठा उपदे□ देना अथवा दूसरों की बुराई करना, दूसरों की गुप्त बात को प्रगट करना, चुगली करना, झूठे दस्तावेज लिखना तथा किस की धरोहर को छल से हरण कर लेना, ये सत्याणुव्रत के पांच अतिचार हैं। बोलने के संदर्भ में कहा गया है कि-

प्रियं वाक्यं प्रदानेन सर्वं तुश्यन्ति जन्तवः।
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता।।

अर्थात् मधुर वचन बोलने से सब जीव संतुश्ट होते हैं। अतएव मिश्ठ वचन बोलना ही योग्य है। मधुर वचन बोलने में कुछ खर्च तो होता नहीं फिर इसमें दरिद्रता क्यों?

अस्तेय- स्तेय का अर्थ है चोरी करना। अस्तेय से तात्पर्य चोरी नहीं करना। जैन आगमों में अस्तेय के लिए अदत्तादान विरमण भब्द का प्रयोग हुआ है। आचार्य उमास्वामी के अनुसार **'अदत्तादानं स्तेयं।'**[११] अर्थात् जो वस्तु प्रदान नहीं की गई उसे लेना स्तेय है। अदत्ता का अर्थ केवल अदत्त वस्तु नहीं है अपितु प्राणी के प्राणों का अपहरण करना भी अदत्तादान है क्योंकि कोई भी प्राणी अपने प्राण हरण की अनुमति प्रदान नहीं करता।[१२]

अचौर्याणुव्रत के अतिचार-

चौर प्रयोगचौरार्था-दान विलोपसदृ□सन्मिश्राः।
हीनाधिकविनिमानं, पंचास्तेये व्यतीपाताः।[१३]

---

[९] रत्नकरण्ड श्रावकाचार, भ्लोक ५५।
[१०] रत्नकरण्ड श्रावकाचार, भ्लोक ५६।
[११] तत्त्वार्थसूत्र, ७/१०।
[१२] आचारांग, पृ. ३४९।
[१३] रत्नकरण्ड श्रावकाचार, भ्लोक ५८।

अर्थात् चोर को चोरी करने की प्रेरणा देना, चोरी की वस्तु को खरीदना, राजा अथवा भासन की आज्ञा का उल्लंघन करना, अधिक कीमत की वस्तु में कम कीमत की वस्तु को मिला देना तथा नाप-तौल में कम-ज्यादा करना ही अचौर्यव्रत के अतिचार हैं।

अस्तेय ही महिमा बताते हुये कहा गया है कि-

तमभिलशति सिद्धिस्तं वृणीते समृद्धिः।
तमभिशरति कीर्तिर्मंचते तं भवार्ति।।[१४]

अर्थात् जो अदत्त का ग्रहण नहीं करता, सिद्धि उसकी अभिलाशा करती है, समृद्धि उसे स्वीकार करती है, कीर्ति उसके पास आती है। सांसारिक पीड़ाएं उसका पीछा छोड़ देती हैं। योगद□न में भी कहा है कि- अस्तेयप्रतिश्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्।[१५] अर्थात् अस्तेय की स्थापना में ही सभी रत्नों की उपस्थापना हो जाती है।

बह्मचर्य- ब्रह्मचर्य वह साधना है जो व्यक्ति के लिए मोक्ष का मार्ग प्र□स्त करती है। भारतीय द□नों में ब्रह्मचर्य को श्रेश्ठजीवन मूल्यों में स्थान दिया गया है। लोक एवं लोकोत्तर जीवन हेतु इसकी साधना आव□यक है। उपनिशदों के अनुसार ब्रह्मचर्य से तात्पर्य ब्रह्म की खोज के लिए किये जाने वाले इन्द्रिय निग्रह से है। मनुस्मृति के अनुसार -

स्वदारे यस्य संतोशः, परिवार विवर्जनम्।
अपवादोऽपि नो यस्य, तस्य तीर्थफलंक गृहे।।[१६]

अर्थात् जो पुरूश अपनी स्त्री में संतुश्ट रहता है और परस्त्रीसेवन से विरत हो जाता है उसकी कोई निन्दा नहीं करता, न किसी प्रकार का अपवाद होता है। घर में ही उसे तीर्थ का फल मिल जाता है।

ब्रह्मचर्याणुव्रत के अतिचार-

अन्यविवाहकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृशः।
इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पंच व्यतीचाराः।।[१७]

अर्थात् दूसरों के विवाह करने में तन-मन-धन से सहयोग देना, अनि□ित अन्य अंगों से भोग क्रिया करना, कुचेश्टा रूप अप□ब्द बोलना, काम लोलुपता और वे□यागमन ये ब्रह्मचर्यव्रत के अतिचार हैं।

अपरिग्रह- जैनद□न में वर्णित 'अपरिग्रह' प्रमुख जीवन मूल्यों में से एक है तथा इसकी वर्तमान में आव□यकता वि□ेश रूप से प्रतीत हो रही है। वर्तमान में प्रतिदिन सामने आने वाली समस्त समस्याओं का

[१४] जिणधम्मो, पृ. ६४५।
[१५] योगद□न, साधनपाद, सूत्र ३०-३६।
[१६] जिणधम्मो, पृ. ८५६।
[17] रत्नकरण्डश्रावकाचार, श्लोक, ६०।

समाधान अपरिग्रह की भावना से हो सकता है। परिग्रह से तात्पर्य लोभ कशाय के उदय से विशयों का संग्रह परिग्रह है। मूर्च्छा परिग्रहः। 'परिग्रहस्य हिंसायाश्च कार्यकारण भावः'।[१८] अर्थात् बिना हिंसा के संग्रह असंभव है। जैनाचार्यो की दृश्टि में संग्रह अंततः हिंसा का ही कारण बनता है।

गृहस्थ जीवन में रहते हुये परिग्रह से बचा नहीं जा सकता, यह सही है। यही कारण है कि जैनाचार्यो ने सामान्य गृहस्थ के लिए परिग्रहपरिमाणव्रत अथवा अपरिग्रहाणुव्रत का विधान किया है। जिसको अपनाकर प्रत्येक व्यक्ति अपरिग्रही बन सकता है तथा समाज के विकास में योगदान दे सकता है।

आचरण की भुद्धि के संदर्भ में कहा है कि-

विद्यावृतस्या संभूतिस्थितिवृद्धि फलोदयाः।
न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव।।[१९]

अर्थात् जिस प्रकार बीज के अभाव में वृक्ष की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि और फलोदय नहीं होता। उसी प्रकार ज्ञान और चारित्र की उत्पत्ति स्थिति और फलोदय सम्यकत्व के अभाव में संभव नहीं है। अतः सामाजिक जीवन की सफलता के लिए आचरण की भुद्धि अत्यन्त आवश्यक है।

ज्ञान के संदर्भ में कहा है कि-

पीयूश समुद्रोत्थं रसायनमनौशधम्।
अन्यानपेक्ष्यमैश्वर्यं, ज्ञानमाहुर्महर्शिण।।[२०]

अर्थात् ज्ञान अमृत है परन्तु समुद्र से निकला हुआ नहीं। ज्ञान रसायन है परन्तु किसी ओशधालय में समुन्नत नहीं। ज्ञान ऐश्वर्य है किन्तु दूसरों के सिर या कंधे पर पैर रखकर प्रकट होने वाला नहीं। ज्ञान जीवन की उपलब्ध है। अतः जीवन मे सफलता एवं सुख प्राप्ति हेतु सम्यग्ज्ञान की साधना अत्यन्त आवश्यक है।

सम्यक चारित्र- जैन दर्शन के अनुसार चारित्र एक ऐसा मूल्य है जिसे भारतीय संस्कृति की आत्मा कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। मोक्ष की साधना में दर्शन ज्ञान के उपरांत चारित्र को ही स्थान दिया गया है। कहा भी है कि- णाणस्स सारमायारो अर्थात् ज्ञान का सार आचार है। उत्तराध्ययन के अनुसार -

ज्ञानेन जानाति भावान्, दर्शनेन च शृद्धत्ते।
चरित्रेण निगृहणाति, तपसा परिशुध्यति।।[२१]

---

[१८]आचारांग भाश्य, १५४।
[१९]रत्नकरण्डश्रावकाचार, पृ. ६६।
[२०]आचार्य महाप्रज्ञ का नैतिक दर्शन, पृ. १७५।
[२१]उत्तराध्ययन, २८/३५।

अर्थात् ज्ञान के द्वारा परमार्थ का स्वरूप जाने, श्रद्धा के द्वारा स्वीकार करें और आचरण के द्वारा उसका साक्षात्कार करें।

संयम मूल्य- जैनदर्शन में मूल्य मीमांसा में सर्वोच्च मूल्य संयम ही है। कहा भी गया है कि- संयमः खलु जीवनम्। संयमनः संयम। अर्थात् इन्द्रियों का समन ही संयम है। संयम के दो भेद हैं- इन्द्रिय संयम और प्राणि संयम। पांच इन्द्रिय और मन को वश में रखना तथा इच्छाओं का भमन करना इन्द्रिय संयम है। पांच स्थावर एवं त्रस जीवों की रक्षा करना प्राणी संयम है। आज समाज में व्याप्त समस्त अनाचार का कारण इन्द्रिय संयम का अभाव ही है। हम सभी अपनी इच्छाओं पर संयम नहीं रख पाते तथा दूसरों के अधिकार पर अपना अधिकार करने लगते हैं और मतभेद प्रारंभ हो जाते हैं। संयम मय जीवन होने से आपसी सामंजस्य का भाव प्रखर होता है तथा हमारे व्यक्तित्व का विकास भी होता है।

भैक्षिक आचार के विकास एवं जीवन भैली में परिवर्तन हेतु कुछ उपाय-

- अहिंसा आदि पांचों अणुव्रतों की अनुप्रेक्षा
- इच्छा परिमाण की अनुप्रेक्षा
- स्वावलंबन की अनुप्रेक्षा
- हृदय परिवर्तन का प्रशिक्षण
- दृश्टिकोण परिवर्तन का प्रशिक्षण
- जीवनशैली परिवर्तन का प्रशिक्षण
- आजीविका भुद्धि का प्रशिक्षण
- व्यसन मुक्त जीवन का प्रशिक्षण।
- स्ह-अस्तित्त्व एवं समन्वय का प्रशिक्षण।

अणुव्रत से तात्पर्य- भब्दिक दृश्टि से अणु अर्थात् छोटा। छोटे-छोटे नियमों के ग्रहण को अणुव्रत कहते हैं। अणुव्रत में किसी सम्प्रदाय का समावेश नहीं है परन्तु धर्म और चरित्र की मुख्यता है। अतः कहा जा सकता है कि जीवन मूल्यों और उसकी उच्चता के मापदण्डों को बदलने का कार्य अणुव्रतो के द्वारा संभव है।

अणुव्रत के निदेशक तत्त्व-

- ❖ दूसरों के अस्तित्त्व के प्रति संवेदनशीनता।
- ❖ मानवीय एकता
- ❖ सह-अस्तित्त्व की भावना

- ❖ साम्प्रदायिक सद्भावना
- ❖ अहिंसात्मक प्रतिरोध
- ❖ व्यक्तिगत संग्रह और भोगोपभोग की सीमा
- ❖ व्यवहार में प्रामाणिकता
- ❖ सधन भुद्धि में आस्था
- ❖ अभय, तटस्थता और सत्यनिश्ठा

अणुव्रत आचार संहिता-

- ❖ मैं किसी भी प्राणी की संकल्प पूर्वक हिंसा नहीं करूँगा/करूँगी।
  - आत्महत्या नहीं करूँगा/करूँगी।
  - भ्रूणहत्या नहीं करूँगा/करूँगी।
- ❖ मैं आक्रमण नहीं करूँगा/करूँगी।
  - आक्रामक नीति का समर्थन नहीं करूँगा/करूँगी।
  - वि□□ान्ति तथा नि:□स्त्रीकरण हेतु करूँगा/करूँगी।
- ❖ मैं हिंसात्मक एवं तोड़-फोड़ मूलक प्रवृत्तियों में सहभागिता नहीं करूँगा/करूँगी।
- ❖ मैं मानवीय एकता में वि□ास करूँगा/करूँगी।
  - जाति, रंग आदि के आधार पर किसी के साथ ऊँच-नीच का व्यवहार नहीं करूँगा/करूँगी।
- ➢ मैं धार्मिक सहिश्णुता रखूँगा।
  - मैं साम्प्रदायिक उत्तेजना नहीं फैलाऊँगा।
- ➢ मैं व्यवसाय और व्यवहार में प्रामाणिक बर्ताव करूँगा/करूँगी।
- ➢ मैं ब्रह्मचर्य की साधना और संग्रह की सीमा का निर्धारण करूँगा/करूँगी।
- ➢ मैं चुनाव में अनैतिक आचरण नहीं करूँगा/करूँगी।
- ➢ मैं व्यसन मुक्त जीवन जीने का प्रयास करूँगा/करूँगी।
- ➢ मैं पर्यावरण की समस्या के प्रति जागरूक रहूँगा/रहूँगी।

विद्यार्थी के अणुव्रत : आचार संहिता

- ➢ मैं परीक्षा में अवैध उपायों का सहारा नहीं लूँगा/लूँगी।
- ➢ मैं हिंसात्मक एवं तोड़-फोड़ मूलक प्रवृत्तियों में भाग नहीं लूँगा/लूँगी।

- मैं अ□लील भब्दों का प्रयोग नहीं करूँगा/करूँगी।
- मैं मादक तथा न□ीले पदार्थों का सेवन नहीं करूँगा/करूँगी।
- मैं चुनाव में अनैतिक आचरण नहीं करूँगा/करूँगी।

□क्षक के अणुव्रत : आचार संहिता

- ✓ मैं विद्यार्थी के बौद्धिक विकास के साथ-साथ चारित्रिक विकास में भी सहयोगी बनूँगा/बनूँगी।
- ✓ मैं विद्यार्थी को उर्त्तीण करने हेतु अवैध उपायों का प्रयोग नहीं करूँगा/करूँगी।
- ✓ मैं अपने लिए विद्यार्थियों में दलगत राजनीति को प्रश्रय नहीं दूँगा/दूँगी।
- ✓ मैं मादक तथा न□ीले पदार्थों का सेवन नहीं करूँगा/करूँगी।

अधिकारी एवं कर्मचारी के अणुव्रत : आचार संहिता

- मैं रि□वत नहीं लूँगा/लूँगी।
- मैं अपने प्राप्त अधिकारों का अनुचित उपयोग नहीं करूँगा/करूँगी।
- मैं अपने कर्त्तव्य के पालन में जानबूझ कर बिलम्ब नहीं करूँगा/करूँगी।
- मैं मादक तथा न□ीले पदार्थों का सेवन नहीं करूँगा/करूँगी।

इस प्रकार से जैनधर्म-द□न में भैक्षिक आचार के संदर्भ में एक वि□ष्ट आचार पद्धति का वर्णन किया गया है जिसको अपनाकर प्रत्येक संसारी प्राणी अपने व्यक्तित्त्व का विकास कर सकता है।